THE ECONOMIC TIMES

Date: 15-09-25

Extracting Critical Minerals Won't Cut It

Mandates and laws must boost recycling

ET Editorial

Critical minerals such as lithium, cobalt, nickel and cadmium are central to India's decarbonisation and electrification drive. The weaponisation of energy after Russia's invasion of Ukraine and China's curbs on seven rare earth elements have made securing critical mineral supply chains more urgent than ever. In this backdrop, GoI's approval of a ₹1,500 cr incentive scheme to build recycling capacity for extracting and producing critical minerals from waste streams—such as e-waste, lithium-ion batteries and other scrap—is a timely and necessary step to strengthen and safeguard domestic supply. This scheme is part of the National Critical Minerals Mission (NCMM).

Turning attention to the recycling value chain makes sense, given that India is the world's third-largest e-waste generator (3.2-5 mt annually) but recycles only 15-17% of it. However, financial incentives can only be part of the solution. GoI needs to deploy policy levers such as mandates for the use of recycled critical minerals and regulatory requirements that move industry away from landfilling waste towards recovery and recycling. Under the new plan, GoI will provide up to 20% capex subsidy on plant, equipment and associated utilities. The effort should be to use the incentive to streamline, professionalise and modernise the informal sector. Creating mandates for recycled critical minerals would generate demand and encourage resource efficiency.

India's need for critical minerals is rising rapidly. As demand surges, these resources are emerging as the foundation of a stronger strategic future. Resource efficiency and the need to reduce the emission footprint of extraction should push policymakers to look beyond e-waste and scrap, and include mine tailings and industrial waste. Policy-led and regulatory interventions must take the lead.

THE HINDU

Date: 15-09-25

Sliver of hope

Editorial

The recent survey of saltwater crocodiles in the Sundarban Biosphere Reserve is a notable advance for conservation in India. The census indicates a rise in overall numbers and demographic diversity, implying an ecological success that is also a marker of how wildlife law and conservation policy are gradually

moving beyond their fixation on a handful of charismatic species, including the tiger and the elephant. In the early years of the Wildlife (Protection) Act 1972, protection was disproportionately directed at megafauna whose appeal could mobilise public opinion. Saltwater crocodiles do not command the same affection, so their recovery demonstrates how the statutory framework, when coupled with targeted interventions such as the Bhagabatpur Crocodile Project, can yield durable gains even for less prominent species. In many countries, reptiles continue to receive weaker safeguards, often subordinated to fisheries or land-use concerns. The increase in Sundarban crocodiles suggests that India's model of combining blanket legal protection with site-specific captive breeding and release programmes has been effective. But in absolute terms, the law still has gaps: it does not adequately anticipate emerging threats linked to climate change, rising salinity or habitat fragmentation. Protection has also been reactive.

As hypercarnivorous apex predators, crocodiles regulate prey populations and remove carcasses from water channels, contributing to the health of mangroves. Thus, their presence signals that creeks and rivers still sustain a functioning food web despite immense pressures from human settlement, cyclones and sea-level rise. Better juvenile survival also indicates that the breeding habitat retains sufficient quality. This is an important ecological marker for the delta, where rising salinity and erosion are narrowing the niches available to wildlife. If the crocodile population can establish a stable age structure, it may bolster the resilience of the Sundarbans' mangrove networks. The species' trajectory also highlights what can be done for other neglected ones. Current Schedules under the Act should be accompanied by proactive, well-funded recovery plans, and public communication strategies need to be recalibrated. The crocodiles did not gain numbers because they became beloved but because conservation agencies invested in their protection. A similar shift in focus can support other species. Climate change integration is also essential. Saltwater crocodiles tolerate wide salinity ranges but many amphibians or freshwater reptiles do not. Anticipatory measures including identifying climate refugia and enabling assisted breeding are thus required. The recovery illustrates that non-charismatic species can benefit from law and policy with sustained attention. For India, the lesson is that a richer, more inclusive, vision of conservation is possible and necessary.

Date: 15-09-25

कर प्रणाली को सरल बनाने की पहल

प्रो. गौरव वल्लभ, (लेखक प्रधानमंत्री आर्थिक सलाहकार परिषद के अंशकालिक सदस्य और वित्त के प्रोफेसर हैं)

वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) का सफर परिवर्तनकारी रहा है। 2017 में शुरू हुई इस व्यवस्था को आलोचकों ने 'गब्बर सिंह टैक्स' कहकर खारिज करने का भी प्रयास किया और इस पर नागरिकों तथा व्यवसायों, दोनों पर बोझ डालने का आरोप लगाया। वास्तव में असली 'गब्बर सिंह टैक्स' जीएसटी से पहले की अव्यवस्थित व्यवस्था थी। उत्पाद शुल्क, वैट और सेवा करों के एक खंडित जाल ने अकुशलता और बढ़ी हुई लागतों को जन्म दिया था। जीएसटी लागू होने के पहले

ट्रक राज्य की सीमाओं पर खड़े रहते थे, छोटी कंपनियां कई फाइलिंग में ही उलझी रहती थीं और उपभोक्ताओं को इसकी कीमत चुकानी पड़ती थी।

जीएसटी ने इसकी जगह देश में एक एकीकृत कर प्रणाली को संभव बनाया, जिससे आवश्यक वस्तुओं पर टैक्स कम हुए और एक अधिक तर्कसंगत ढांचा तैयार हुआ। अब जीएसटी 2.0 के साथ भारत ने एक निर्णायक कदम आगे बढ़ाया है, टैक्स स्लैब को सुव्यवस्थित किया है और दरों में कटौती की है। शुरुआत में जीएसटी में चार स्लैब (5, 12, 18, 28 प्रतिशत) थे। ऐसा उन राज्यों के बीच आम सहमति बनाने के लिए किया गया था, जो नई व्यवस्था के तहत होने वाले संभावित राजस्व नुकसान को वहन करने के लिए तैयार नहीं थे।

इस समझौते ने भारत को जीएसटी युग में प्रवेश करने में मदद की, लेकिन इसने जटिलता और विवादों को भी जन्म दिया, जो जीएसटी की सरलता के मूल दर्शन के विपरीत थे। जीएसटी 2.0 एक स्वाभाविक सुधार का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें दो मुख्य स्लैब (5 और 18 प्रतिशत) और विलासिता तथा अहितकर वस्तुओं के लिए 40 प्रतिशत की कर दर की व्यवस्था की गई है।

यह सुधार भी सही समय पर किया गया है। वैश्विक अनिश्चितताएं और टैरिफ युद्ध व्यवसायों के लिए बाधाएं पैदा कर रहे हैं। अनुपालन बोझ एवं कार्यशील पूंजी की रुकावटों को कम करके और बड़े पैमाने पर उपभोग तथा श्रम-प्रधान क्षेत्रों में टैक्स दरों को आसान बनाकर जीएसटी 2.0 आपूर्ति-पक्ष को ठीक उसी समय सहायता प्रदान करता है जब फर्मों को इसकी आवश्यकता है। अन्य संरचनात्मक सुधारों के साथ जीएसटी 2.0 वैश्विक अस्थिरता के बीच भारत को एक प्रतिस्पर्धी और स्थिर उत्पादन आधार के रूप में स्थापित करने के व्यापक प्रयास का हिस्सा है।

रोजमर्रा की आवश्यक वस्तुएं और बड़े पैमाने पर उपभोग की जाने वाली वस्तुएं पांच प्रतिशत, जबकि प्रमुख औद्योगिक इनपुट 18 प्रतिशत कर के दायरे में आ गई हैं, जिससे घरों और फर्मों, दोनों की लागत कम होगी। दूध, पनीर और चपाती जैसी मुख्य वस्तुओं के साथ-साथ 33 से अधिक जीवनरक्षक दवाओं को पूरी तरह से कर मुक्त कर दिया गया है। आटोमोबाइल, सीमेंट और इलेक्ट्रानिक्स पर करों में भारी कटौती की गई, जिससे क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा मिलेगा।

त्योहारी सीजन से पहले इसे लागू करने से घरेलू खर्च पर भी अधिकतम प्रभाव सुनिश्चित होता है। एसबीआइ रिसर्च का अनुमान है कि औसत प्रभावी जीएसटी दर अब शुरुआत के 14.4 प्रतिशत से घटकर लगभग 9.5 प्रतिशत हो गई है। जीएसटी 2.0 के तहत जिन 453 वस्तुओं की दरों में बदलाव किया गया है, उनमें से 413 (91 प्रतिशत) वस्तुओं के कर में कमी आई है, और लगभग 295 वस्तुओं पर कर दर पहले के 12 प्रतिशत से घटकर 5 प्रतिशत या शून्य हो गई है, जो परिवारों को राहत देने की दिशा में एक निर्णायक कदम है।

जीएसटी सुधारों के कारण कुल अतिरिक्त सकल मांग 1.98 लाख करोड़ रुपये तक पहुंचने का अनुमान है। समवर्ती आयकर सुधारों के साथ कुल अतिरिक्त मांग 5.31 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच सकती है, जो सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 1.6 प्रतिशत की वृद्धि करेगी। इससे संभावित रूप से वित्त वर्ष 2025-26 में जीडीपी वृद्धि 6.5 प्रतिशत और वित्त वर्ष 2026-27 में 7 प्रतिशत तक पहुंच सकती है।

दरों में कटौती के अलावा जीएसटी 2.0 कर प्रणाली के काम करने के तरीके को बेहतर बनाने पर भी केंद्रित है। पंजीकरण को स्वचालित बना दिया गया है, रिफंड की प्रक्रिया तेज हो गई है और अस्थायी इनपुट क्रेडिट की अनुमति दी गई है,

जिससे उद्यमों के लिए कार्यशील पूंजी पर दबाव घटा है। उल्टे शुल्क ढांचे जैसे लंबे समय से चले आ रहे मुद्दों का भी समाधान किया गया है, जिससे उन क्षेत्रों को राहत मिली है, जो पहले लागत संबंधी नुकसान झेल रहे थे। एमएसएमई के लिए कागजी कार्रवाई का बोझ घटा है।

सुधार एक सतत प्रक्रिया है। जीएसटी स्वयं 2017 से पहले की खंडित प्रणाली की तुलना में एक सुधार था और जीएसटी 2.0 सरलता तथा निष्पक्षता की ओर एक और कदम है। जैसे-जैसे इसका अनुपालन होगा, नीतिगत सुधार और भी बेहतर हो सकेंगे। जीएसटी 2.0 भारत में एक सरलीकृत, अधिक निष्पक्ष और विकासोन्मुखी अप्रत्यक्ष कर प्रणाली बनाने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम है।

कर दरों को सोच-समझकर युक्तिसंगत बनाकर और व्यापक संरचनात्मक एवं प्रक्रियागत सुधारों के माध्यम से घरेलू क्रय शक्ति बढ़ाकर जीएसटी 2.0 उपभोग, औद्योगिक विकास और समग्र आर्थिकी को मजबूती से बढ़ावा देगा। यह समावेशी और आत्मनिर्भर भारत के लिए एक निर्णायक उत्प्रेरक के रूप में भी कार्य करेगा, जो वर्तमान भू-राजनीतिक परिवेश में आर्थिक गति को बढ़ावा देने में सहायक है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 15-09-25

एथनॉल की अनिवार्यता

संपादकीय

इस वर्ष मोटर वाहनों के ईंधन में 20 फीसदी एथनॉल मिलाने (ई20 ईंधन) का लक्ष्य निर्धारित समय से पांच साल पहले हासिल करने की घोषणा की गई है। इसे आगे बढ़ाकर ई27 तक ले जाने का इरादा जाहिर किया गया है जो स्वागतयोग्य है। यह कदम ऐसे समय में आया है जब भारत के ताप बिजली घरों के कारण ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन तेजी से बढ़ रहा है और शहरों में प्रदूषण की समस्या एक राष्ट्रीय स्वास्थ्य संकट में तब्दील होती जा रही है। ई20 ईंधन देश की 2070 तक विशुद्ध शून्य उत्सर्जन लक्ष्य हासिल करने तथा आयातित कच्चे तेल पर देश की निर्भरता कम करने की राष्ट्रीय प्रतिबद्धता के अनुरूप है।

सरकारी आंकड़े बताते हैं कि एथनॉल आपूर्ति वर्ष (ईएसवाई) 2014-15 में जब एथनॉल मिश्रण केवल 1.5 फीसदी था, से लेकर 2024-25 तक सरकारी तेल कंपनियों ने 1,44,087 करोड़ रुपये मूल्य की विदेशी मुद्रा बचाई है। यह करीब

2,45,000 टन कच्चे तेल के बराबर है और इससे अनुमानत: इतने कार्बन डाईऑक्साइड की बचत हुई जो शायद 30 करोड़ वृक्ष लगाने से बचता।

नीति आयोग के एक अध्ययन के अनुसार, जीवन-चक्र उत्सर्जन के आधार पर गन्ना और मक्के से बने एथनॉल से होने वाला ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन पेट्रोल की तुलना में क्रमशः 65 फीसदी और 50 फीसदी कम हैं। एथनॉल उत्पादन किसानों के लिए भी लाभकारी सिद्ध हो सकता है, क्योंकि यह मक्का, गन्ना और धान की पराली के लिए एक स्थायी बाजार उपलब्ध कराता है। इस उपलब्धि के साथ भारत अब ब्राजील, अमेरिका और यूरोप जैसे विशिष्ट देशों के समूह में शामिल हो गया है, जो पेट्रोल में एथनॉल का मिश्रण करते हैं।

उपभोक्ताओं के नजरिये से देखें तो इस बदलाव का बेहतर प्रबंधन किया जाना चाहिए था। हालांकि ई20 चुनिंदा पंपों पर ही उपलब्ध था लेकिन अब यह देश के करीब 90,000 पंपों पर इकलौता विकल्प है। आश्चर्य नहीं है कि माइलेज और एक्सिलरेशन पर ई20 के प्रभाव को लेकर बहुत बड़े पैमाने पर असमंजस के हालात बन गए हैं। यूरोप और अमेरिका में वाहन चालकों को यह विकल्प दिया गया है कि वे अपने वाहन की उम्र के मुताबिक ई10, ई15 या ई20 ईंधन डलवाएं।

2020 में सोसाइटी ऑफ इंडियन ऑटोमोबाइल मैन्युफैक्चरर्स ने कहा कि ई20 के साथ ई10 ईंधन का विकल्प भी उपलब्ध कराया जाना चाहिए ताकि वाहनों का बेहतरीन प्रदर्शन सुनिश्चित हो सके। उसने कहा कि रबर के हिस्से या गास्केट आदि को बदलना एक बड़ा काम होगा। भारत में अधिकांश कार इंजनों को ई10 ईंधन के लिए तैयार किया जाता है। केवल एक अप्रैल 2025 के बाद बने इंजन ही ई20 ईंधन के लिए बने हैं। वाहन निर्माताओं ने पहले यह संकेत दिया था कि वाहनों के प्रदर्शन पर असर पड़ सकता है। अब लगता है कि उन्होंने सरकार के नजरिये को स्वीकार कर लिया है और वे उपभोक्ताओं को आवश्स्त कर रही हैं कि वाहनों के प्रदर्शन पर पड़ने वाला असर बहुत मामूली है। उद्योग जगत के विचारों में यह भिन्नता शायद ही चिंताओं को दूर कर सके।

लंबी अवधि में भले ही हवा की गुणवत्ता या किसानों की आय के रूप में जैव ईंधन के व्यापक लाभ तात्कालिक परिवर्तन की कीमत पर भारी पड़ें लेकिन इस नीति से अनचाहे परिणाम भी जुड़े हुए हैं। इनमें से एक है खाद्यान्न बनाम ईंधन की बहस क्योंकि किसानों को जैव ईंधन संबंधी फसलें उगाने पर खाद्यान्न फसलों की तुलना में बेहतर आय हासिल हो रही है। उदाहरण के लिए मक्के की कीमतें जैव ईंधन की मांग बढ़ने के साथ ही दो सालों में 1,800 रुपये प्रति क्विंटल से बढ़कर 2,500 रुपये प्रति क्विंटल हो गई हैं। इससे किसानों की आय तो बढ़ी है लेकिन पोल्ट्री और पालतु पशुओं के खाद्यान्न पर इसका विपरीत असर हुआ है।

मक्के के उत्पादन का 70 फीसदी इसी पशु आहार में जाता है। इसके अलावा मोटे अनाज तथा तिलहन की खेती की जमीन में अब मक्का उगाया जा रहा है। इसके अलावा अन्य जैव ईंधन वाली फसलों यानी चावल और गन्ने की खेती मौसम के लिहाज से बहुत संवेदनशील होती है। पंजाब, हरियाणा तथा महाराष्ट्र में उनका रकबा बढ़ने का देश की जल सुरक्षा पर बुरा असर हो सकता है। इन प्रतिस्पर्धी मांगों का प्रबंधन करना होगा तथा सरकार को यह सुनिश्चित करना होगा कि खाद्य और जल सुरक्षा की कीमत पर ईंधन सुरक्षा न हो।

Date: 15-09-25

बिजली उत्पादन में कोयले से जुड़े अहम सवाल

सुनीता नारायण, (लेखिका सेंटर फॉर साइंस ऐंड एन्वायरनमेंट से जुड़ी हैं)

जलवायु परिवर्तन और दुनिया के विकासशील देशों की ऊर्जा की जरूरतों को पूरा करने की चुनौती के बीच एक बड़ा अहम सवाल यह है कि हम कोयले और उससे बनने वाली बिजली का क्या करें? तापमान को 1.5 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखने के लिए दुनिया का कार्बन बजट तेजी से खत्म हो रहा है, जो एक ऐसा सुरक्षा उपाय है जो हमें पूरी तरह तबाही की स्थिति से बचाएगा।

दरअसल अब हमें ऐसे समाधान चाहिए जो सभी के हित में काम करें। यहीं पर कोयले का सवाल पेचीदा हो जाता है। यह कहना आसान है कि 'कोयले को जमीन में ही रहने दिया जाए' यानी बिजली बनाने के लिए कोयले का इस्तेमाल न करें क्योंकि यह हमारे वातावरण को ग्रीनहाउस गैसों से भर देता है। लेकिन सवाल यह है कि ऊर्जा की कमी वाली दुनिया में यह कैसे कारगर होगा?

यह भी सच है कि कई वर्षों से कार्बन उत्सर्जन कम करने का उपदेश देने वाले देश बिजली के लिए कोयले का इस्तेमाल करते रहे हैं। इन देशों की वजह से जो उत्सर्जन हुआ, वह अभी भी हमारे वातावरण में मौजूद है, जिसमें कार्बन डाइऑक्साइड भी शामिल है। हालांकि अब ये देश अधिकांशतः दूसरे जीवाश्म ईंधन, प्राकृतिक गैस को अपना रहे हैं जो थोड़ा बहुत ही स्वच्छ ऊर्जा का स्रोत है और इससे भी छोटे पैमाने पर ही सही ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन होता है।

यूरोपीय संघ (ईयू) ने अमेरिका के साथ एक ऐतिहासिक व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं, जिसके तहत उसने तीन साल के लिए हर साल 250 अरब डॉलर के ऊर्जा उत्पाद यानी प्राकृतिक गैस, कच्चा तेल और कोयला आयात करने का वादा किया है। मुमकिन है कि यह एक हवाई वादा हो सकता है, लेकिन इसका मतलब यह भी है कि यूरोपीय संघ ने अब जीवाश्म ईंधन से जुड़े रहने के लिए सहमति जता दी है जो उसकी हरित ऊर्जा योजनाओं के विपरीत है।

ऐसे में भारत जैसे देशों को क्या करना चाहिए, जहां ऊर्जा की कमी का समाधान निकालने के साथ ही किफायती तरीके से विकास करने की सख्त जरूरत है और देश को तरह की कठोर वास्तविकताओं का सामना करना पड़ रहा है? ऐसे में सवाल यह है कि अगर हम स्वच्छ ऊर्जा के बलबूते विकास करने की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं तो क्या हमें कोयले पर निर्भरता छोड़ देनी चाहिए, या हमें पुरानी और नई ऊर्जा के स्रोतों को संतुलित करने के तरीके खोजने चाहिए?

मैं हमेशा से यह कहती रही हूं कि भारत सरकार की ऊर्जा बदलाव की योजना हमारे लिए सही रास्ता है जो कोयले को पूरी तरह हटाने के बजाय सिर्फ कम करने पर आधारित है। तथ्य यह है कि वर्ष 2030 तक हमारी ऊर्जा की मांग दोगुनी हो जाएगी, और यह बढ़ोतरी स्वच्छ ऊर्जा के स्रोतों, खासकर पवन ऊर्जा और सौर ऊर्जा से पूरी होगी। वर्ष 2030 तक, बिजली की मांग का 70-75 फीसदी पूरा करने के बजाय कोयला सिर्फ 50 फीसदी मांग ही पूरा कर पाएगा।

हमें इस बारे में भी बात करनी चाहिए कि इसका क्या अर्थ है और कोयले पर आधारित बिजली क्षेत्र से ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम करने के लिए क्या किया जा सकता है। मैं जानती हूं कि यह एक वर्जित विषय है क्योंकि यह मानना

बेहतर है कि कोयला जल्द ही इतिहास का हिस्सा बन जाएगा। लेकिन अब हम थोड़ा व्यावहारिक होते हैं। हमें किसी भी कीमत पर सभी क्षेत्रों में उत्सर्जन कम करना होगा। हमें स्थानीय हवा की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए भी ऐसा करना चाहिए, ताकि हवा में मौजूद उन जहरीले प्रदूषक तत्त्वों को कम किया जा सके जो स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को बढ़ाते हैं। हमें वैश्विक स्तर पर जलवायु की स्थिति बेहतर करने के लिए भी ऐसा करना चाहिए। अगर हम ऐसी रणनीतियां बना पाते हैं जो दोनों ही स्तर पर काम करे तब यह हमारे लिए सफलता वाली स्थिति होगी।

मेरे सहयोगियों ने 'भारत में कोयला-आधारित ताप विद्युत क्षेत्र को कार्बन मुक्त करने से जुड़े रोडमैप' शीर्ष वाली रिपोर्ट में भी यही बात की है। हमारे विश्लेषण से पता चलता है कि, अगर देश ताप विद्युत संयंत्र को कार्बन मुक्त करने की रणनीति अपनाता है तब इसके कारण उत्सर्जन दो अन्य क्षेत्रों, लोहा और इस्पात एवं सीमेंट से भी कम हो सकता है।

रोडमैप में पहला कदम यह है कि मौजूदा संयंत्र को अपनी श्रेणी के सबसे अच्छे संयंत्र जैसी मानक कुशलता हासिल करने की आवश्यकता है। उदाहरण के तौर पर अहम तकनीक पर आधारित विद्युत संयंत्र जो मौजूदा कुल संयंत्र का लगभग 85 फीसदी हैं उन्हें कम से कम अपनी श्रेणी में शीर्ष स्तर पर बेहतर प्रदर्शन करने वाले संयंत्रों (जैसे टाटा पावर की 40 साल पुरानी ट्रॉम्बे इकाई, तेलंगाना राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड द्वारा संचालित कोतागुडम ताप विद्युत स्टेशन या जेएसडब्ल्यू का तोरनगल्लू संयंत्र) के उत्सर्जन मानक तक पहुंचना चाहिए। इससे कुल उत्सर्जन में काफी सुधार होगा।

दूसरा कदम है कच्चे माल के तौर पर कोयले की जगह दूसरे विकल्प का इस्तेमाल करना। कई बिजली संयंत्र पहले से ही जैविक उत्पादों के अवशेष (बायोमास) का इस्तेमाल, कोयले के साथ मिलाकर कर रहे हैं। हमारा सुझाव 20 फीसदी बायोमास का इस्तेमाल अनिवार्य करना है, जिससे बड़े पैमाने पर कार्बन डाई ऑक्साइड उत्सर्जन में कमी आएगी। लेकिन इन सबके लिए उत्सर्जन लक्ष्यों और स्पष्ट निर्देशों के साथ एक बेहतर योजना की दरकार है। उदाहरण के तौर पर अभी सरकार की योजना उन्नत ताप विद्युत संयंत्र बनाने की है, जो निस्संदेह पुरानी परंपरागत तकनीक से अधिक कुशल और स्वच्छ होगी।

हालांकि सही नीतिगत प्रोत्साहन के बिना, इनमें से 40 फीसदी नई पीढ़ी की इकाइयां 50 फीसदी प्लांट लोड फैक्टर (पीएलएफ) से कम पर काम करती हैं, जिसका मतलब है कि उनका उत्सर्जन, पुरानी तकनीक वाले संयंत्र से ज्यादा है। इसकी असल वजह यह है कि मौजूदा मेरिट ऑर्डर डिस्पैच सिस्टम यानी बिजली कंपनियों को सबसे सस्ती बिजली पहले बेचने के नियम तय करने वाली प्रणाली, उत्पादन की लागत पर आधारित है।

पुराने बिजली संयंत्र से बिजली बनाना सस्ता होता है, क्योंकि उनकी पूंजीगत लागत कम हो चुकी है, या ऐसी इकाइयों से भी बिजली बनाना सस्ता होता है जिनमें तकनीक या रखरखाव में कम निवेश हुआ है। यही सबसे बड़ी खामी है जो अब भी भी कोयले को बादशाहत की स्थिति में बनाए हुए है। इसे वास्तव में खत्म करने की जरूरत है और ऐसा करना संभव हो सकता है।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 15-09-25

कांटों भरी राह

संपादकीय

नेपाल की पहली महिला मुख्य न्यायाधीश रहीं सुशीला कार्की को पहली अंतरिम महिला प्रधानमंत्री की शपथ दिलाई गई है। उन्होंने केपी शर्मा ओली की जगह ली है जिन्हें भ्रष्टाचार के आरोपों और सोशल मीडिया को प्रतिबंधित करने के खिलाफ युवाओं के भारी आक्रोश के चलते इस्तीफा देना पड़ा। कार्की की ईमानदार छवि के चलते जेन- जी प्रदर्शनकारियों समेत राष्ट्रपति और कानूनी विशेषज्ञों की सहमति से चुना गया । कार्की ने कहा कि युवाओं का उन पर विश्वास है, जो चाहते हैं चुनाव कराए जाएं और देश को अराजकता से निकाला जाए। ताजा साक्षात्कार में उन्होंने आंदोलन के दौरान मारे गए छात्रों के दुखी परिवारों के लिए कुछ करने की बात की। पचास से ज्यादा लड़के-लड़कियां इस उपद्रव के दौरान मारे जाने की खबर है। भ्रष्टाचार हटाने के सवाल पर कार्की ने स्पष्ट किया कि यह मांग तभी पूरी हो सकेगी जब सरकार बनेगी। नेपाल में जन्मी कार्की ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर करके त्रिभुवन विवि से कानून की डिग्री ली। वकालत और अध्यापन के बाद वे न्यायाधीश बनीं और 2016 में नेपाल की पहली महिला मुख्य न्यायाधीश के रूप में पद संभाला। भ्रष्टाचार के मामलों की सुनवाई करने के लिए मशहूर कार्की को महाभियोग का सामना भी करना पड़ा जिसके चलते उन्हें निलंबित कर दिया गया था । पक्षपात और सरकार के काम में दखल देने के आरोपों का उन्होंने सख्ती से सामना किया। इस दरम्यान जनता ने न्यायपालिका की आजादी के लिए आवाज बुलंद की तो सुप्रीम कोर्ट ने संसद की आगे की कार्रवाई पर रोक लगा दी। संसद के प्रस्ताव वापस लेने से जनता के बीच कार्की की छवि सत्ता के दबाव में न आने वाली दबंग शख्सियत की बन गई। भारत को लेकर उनके भीतर विशेष लगाव है। गंगा, वाराणसी और बीएचयू की यादों को समेटे वह अच्छी हिन्दी बोलती हैं। उनके ढेरों रिश्तेदार और परिचित भारत में रहते हैं। वह छोटे-मोटे मतभेदों के बावजूद भारत-नेपाल के रिश्तों को लेकर आशान्वित हैं। निःसंदेह उनके समक्ष भ्रष्टाचार से जूझने की चुनौती है। जेन-जी के आक्रोश से जूझना और देश की सरकार से जेन जी की उम्मीदों पर खरा उतरने के प्रयासों में उन्हें तेजी लानी होगी। युवाओं में जिन नेपो किड्स की वैभवशाली जीवनशैली के प्रति जबरदस्त गुस्सा है, उसे भी शांत करते नजर आना होगा। बेशक, यह सब आसान नहीं हैं। कार्की के लिए खांटी राजनीतिक दलों व नेताओं के सामने राह में ढेरों रोड़े हैं, और कांटे भी कम नहीं।

Date: 15-09-25

आपदा का घर बना हिमालय

सुरेश भाई

हिमालय ऋषि-मुनियों और संत-महात्माओं की तपस्थली रहा है। उन्होंने यहां वेद, पुराण उपनिषदों की रचना की । इसलिए कर पाए कि उन्हें यहां शांति की अनुभूति होती थी । हिमालय की जैव-विविधता के कारण प्राकृतिक आपदा यहां से सिर झुका कर चली जाती थी। लेकिन समय बदल गया है। मनुष्य ने प्रकृति के साथ जीने के जो संयमित नियम-कायदे बनाए थे उनका उल्लंघन करना शुरू कर दिया है। इसके चलते प्रकृति का रौद्र रूप इतना विकराल हो चुका है कि आगे किसी भी प्राणी के लिए हिमालय में रहना मुश्किल होता जा रहा है, जो मैदानी क्षेत्रों में भी भीषण आपदा पैदा कर रहा है। मनुष्य पछतावे के रूप में चालाकी से अपनी करतूत को जलवायु परिवर्तन से जोड़ रहा है। लेकिन समस्या का सामना करने के लिए जरूरी शर्तों को लागू नहीं कर पाता । यही कारण है कि भारतीय हिमालय क्षेत्र भीषण आपदा की चपेट में आ गया है।

इस बरसात में जिस तरह से जल प्रलय का सामना हुआ है, उससे प्राकृतिक और मानवीय, दोनों पहुलओं से चर्चा फिर से शुरू हो गई है। इस संदर्भ में देश की सुप्रीम अदालत के निर्णय काबिलेतारीफ हैं। सामाजिक कार्यकर्ता, पर्यावरणविद्, वैज्ञानिक कहते रहे हैं कि विकास परियोजनाओं की समीक्षा के लिए विशेषज्ञ समिति होनी चाहिए जिसके द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर परियोजनाओं के संदर्भ में सही पर्यावरणीय प्रभाव का आकलन हो। हिमाचल में बाढ़ के दौरान रावी नदी में बह कर आई अंधाधुंध लकड़ी का संज्ञान लेकर सुप्रीम कोर्ट ने 4 अगस्त को कहा कि बड़े पैमाने पर वनों का कटान हो रहा है। वन माफिया ने जंगल काट कर छुपा रखे हैं, जो बरसात में बह कर नदियों में आ रहे हैं। यह अतिश्योक्ति नहीं है कि हिमालय के ऊंचे से ऊंचे स्थान पर वनों का व्यावसायिक दोहन हो रहा है। लाखों पेड़ों को राजस्व के लिए काटा जा रहा है। बड़े पेड़ों को काटने से चट्टानें अस्थिर हो जाती हैं, जो बरसात में भूस्खलन का रूप लेता है।

हर साल जंगलों में भीषण आग भी भूस्खलन को न्योता दे रही है। इसके अलावा नदियों के किनारे बन रही सड़कों के चौड़ीकरण में अंधाधुंध पेड़ों का कटान हो रहा है। चारधाम में ऑल वेदर रोड के निर्माण के दौरान लाखों पेड़ काटे गए। भागीरथी जैसे संवेदनशील जोन में भी अमूल्य वन प्रजाति देवदार के पेड़ों पर संकट मंडरा रहा है। भागीरथी इको सेंसेटिव जोन 2012 में बन गया था जिसकी शर्तों को लागू करने में लापरवाही बरती गई है जबकि भागीरथी यमुना का क्षेत्र में सेंट्रल थ्रस्ट जोन में आता है। यदि पिछले 13- 14 वर्षों में इसको नियमानुसार क्रियान्वित किया जाता तो बार-बार आ रही आपदाओं को कम किया जा सकता था ।

मानवीय आपदा की सच्चाई यह भी है कि 5 सितम्बर तक हिमाचल में 1115, उत्तराखंड में 520, जम्मू कश्मीर में दर्जनों सड़कें बंद पड़ी थीं। इसका कारण है कि चौड़ी सड़कों के निर्माण के दौरान विस्फोटों और जेसीबी मशीनों के उपयोग से पहाड़ की रीढ़ के ऊपर थमी हुई मिट्टी बरसात के समय नदियों की तरफ बहने के लिए मजबूर हो गई है। पहाड़ों पर भूकंप से भी दरारें आ रखी हैं। जंगल कटने से भी गांव के ऊपर से भूस्खलन होता है।

कारण स्पष्ट है कि तीर्थाटन को भूल कर पर्यटन संस्कृति के विकास के लिए नदी-नालों के मुहाने पर उग आईं बस्तियों के नियंत्रण पर सोचा ही नहीं गया और उसे विकास की संज्ञा दी गई है। बाजारीकरण और पर्यटन स्थलों के समीप आकर रोजगार के लिए लोग अपना गांव छोड़ रहे हैं। जहां पर ग्लेशियरों और झीलों से आ रहे गाड़-गदेरों और नदियों के मुहाने पर बन रहीं इमारतों के भूस्खलन की चपेट में आकर भारी जन-धन की हानि हो रही है। पुराने समय में भी नदियों में आज की तरह ही जल प्रलय होता था लेकिन तब लोगों के घर, होटल नदी के किनारे नहीं होते थे।

हिमालय के ऊंचे पर्वत शिखरों से बर्फीली झीलें कहर बरपा रही हैं। इस बार 2013 की केदारनाथ आपदा से अधिक नुकसान हुआ है। यमुनोत्री में भी स्याना चट्टी के पास तीसरी बार झील बनी है जिसके कारण आसपास के गांवों पर खतरे के बादल मंडरा रहे हैं। आपदा राहत और पुनर्वास के लिए केंद्र से अकेले उत्तराखंड ने ही 5 हजार करोड़ रुपये की मांग की है। इस तरह से बजट की मांग कब तक होती रहेगी। अच्छा हो कि हिमालय क्षेत्र के विकास का मॉडल मैदानी मानकों से अलग हो । जहां पर हिमालय की भौगोलिक संरचना को ध्यान में रख कर निर्माण हो जिससे यहां के छोटे और सीमांत किसानों की आजीविका बची रहे। निचले क्षेत्रों को भी बचाया जा सके। तीर्थयात्रियों को भी सुरक्षा मिले। सुरंग आधारित परियोजनाओं पर रोक लगे। जल, वन, ग्लेशियर, बुग्याल, जैव-विविधता संरक्षण, सूक्ष्म जल विद्युत की दिशा में कदम बढ़ाने की आवश्यकता है जिसके लिए हिमालय की अलग नीति हो ।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 15-09-25

अपनी ताकत के भरोसे बढ़े भारत

आलोक जोशी

वसुधैव कुटुंबकम और विश्व बंधुत्व जैसी बातें शायद अब पुरानी पड़ गई हैं। पिछले करीब पचास वर्षों से 'कनेक्टेड वर्ल्ड, ओपेन इकोनॉमी, फ्री मार्केट' और 'ग्लोबल विलेज' जैसे जो नारे उछल रहे थे, लगता है कि वे यकायक धराशायी हो गए हैं। खासकर अमेरिका में डोनाल्ड ट्रंप की जीत के बाद से जिस अंदाज में अमेरिका को फिर से 'महान' बनाने का नारा उछाली गया, उसने अंतरराष्ट्रीय व्यापार, कारोबार, राजनीति व कूटनीति की पूरी इबारत ही बदलकर रख दी है।

भारत और अमेरिका के रिश्ते तो कुछ यूं हो गए हैं कि जैसे- खूब पर्दा है कि चिलमन से लगे बैठे हैं। व्यापार-समझौते पर लंबी बातचीत के बाद बातटूट गई। और राष्ट्रपति ट्रंप ने भारत पर न सिर्फ 50 प्रतिशत सीमा शुल्क लगाने का एलान कर दिया, बल्कि उनकी तरफ से तरह-तरह के आरोप, कटाक्ष और धमकियों का सिलसिला भी रुक-रुक कर जारी रहा। यहां तक कि अमेरिकी राष्ट्रपति ने यूरोपीय संघ को भी कहा है कि रूस से तेल खरीदने का बदला लेने के लिए वह भारत पर सौ फीसदी शुल्क लगाए।

हालांकि, इस बात की संभावना बहुत कम है, क्योंकि यूरोप ऐसे टैरिफ लगाता नहीं है। मगर यूरोपीय संघ रूस पर दबाव बनाने या उसे आर्थिक रूप से पंगु बनाने के लिए अमेरिका के साथ खड़ा हो सकता है। और इसके लिए वह आर्थिक प्रतिबंध लगाने का फैसला कर सकता है, न सिर्फ रूस पर, बल्कि उन देशों पर भी, जो रूस से व्यापार कर रहे हैं। इरादा यही है कि रूस को पैसा मिलना बंद हो जाए। इसके लिए वह इन देशों से बैंकिंग लेन-देन पर रोक लगा सकता है। उनकी संपत्ति फ्रीज कर सकता है। और यह भी कर सकता है कि रूस से तेल लेकर जाने वाले टैंकरों को कोई भी यूरोपीय कंपनी री-इंश्योरेंस न दे।

हालांकि, अभी तक यूरोपीय संघ के सदस्य 27 देश इस मामले पर बंटे हुए हैं, मगर अमेरिका का दबाव बना हुआ है और कई यूरोपीय देश भी मानते हैं कि अगर ये दोनों मिलकर प्रतिबंध लगाएंगे, तो रूस को घुटनों पर आते देर नहीं लगेगी। रूस और यूक्रेन का युद्ध शुरू हुए साढ़े तीन साल बीत चुके हैं। ऐसे में, इसे रोकना सभी को जरूरी लग रहा है और यही वजह है कि यूरोपीय संघ इस मसले पर कड़े फैसलों की तैयारी कर रहा है। हमारे लिए यह चिंता की बात इसलिए है, क्योंकि भारत रूस के कच्चे तेल के सबसे बड़े और अहम खरीदारों में है। अगर यूरोपीय संघ की तरफ से किसी भी तरह के प्रतिबंध लगे, तो इसके दो नुकसान हो सकते हैं। एक अंतरराष्ट्रीय मंच पर देश की साख में कमी और दूसरा, भारतीय कारोबारियों के लिए यूरोप में कई तरह की नई परेशानियां । मगर दूसरी तरफ यूरोपीयसंघ की नजर भी भारत के विशाल बाजार पर है, साथ ही वहबदलती दुनिया में भारत की बढ़ती हैसियत को भी नजरंदाज नहीं कर सकता है। इसीलिए, वह बात को इस हद तक नहीं खींचना चाहता कि भारत के साथ व्यापार मुश्किल में पड़ जाए। यूरोपीय संघ और भारत के बीच व्यापार समझौते पर बातचीत काफी आगे बढ़ चुकी है, और दोनों में से कोई भी नहीं चाहेगा कि अब वह खटाई में पड़ जाए।

उधर, अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप खुद भी दुविधा में दिख रहे हैं। एक तरफ तो वह यूरोपीय संघ पर दबाव बना रहे हैं कि भारत और चीन पर सख्त कार्रवाई हो, मगरदूसरी तरफ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से बातचीत की भी बाट जोह रहे हैं। काफी खींचतान के बाद दोनों देशों के बीच व्यापार वार्ता फिर से शुरू हो चुकी है। हो सकता) जल्द ही अमेरिका और भारत के बीच व्यापार समझौते की खबर भी आने लगे।

इस चिंता के बीच अंतरराष्ट्रीय क्रेडिट रेटिंग एजेंसी 'फिच' ने भारत को एक खुशखबरी भी सुना दी है। उसने कहा है कि भारत में मजबूत घरेलू मांग को देखते हुए उसे चालू वित्तवर्ष 2025-26 में भारत की जीडीपी विकास दर 6.9 प्रतिशत होने की उम्मीद है। इससे पहले उसे यह दर 65 फीसदी पर रहने की संभावना दिख रही थी। फिच का कहना है कि अमेरिका केटैरिफ का असर कुछ समय तक तो दिख सकता है, लेकिन दोनों देशों के बीच व्यापार समझौता हो ही जाएगा, जिससे यह परेशानी भी खत्म हो जाएगी।

फिच की इस खुशखबरी से पहले ही जीएसटी दरों में कटौती की खबर आ चुकी थी और उसका असर होना भी स्वाभाविक है। उधर महंगाई दर भी आठ साल में सबसे नीचे पहुंच चुकी है और नई जीएसटी व्यवस्था लागू होने पर जो चीजें सस्ती होंगी, उनसे अर्थव्यवस्था को जबर्दस्त सहारा मिलने की उम्मीद है। अभी तो अनुमान ही लगाए जा रहे हैं, लेकिन कार के शोरूम में ग्राहकों की गिनती बढ़ने लगी है।

जाहिर है, उपभोक्ता की जेब में रकम बचेगी, तो वे कुछ और चीजें खरीदने की भी सोच सकते हैं या इन पैसे का कोई और बेहतर इस्तेमाल वे कर सकते हैं। दोनों ही सूरत में स्थिति अर्थव्यवस्था के लिए सुखद रहेगी। कुलजमा बात यही है कि अब यहाँ से हालात बिगड़ने की आशंका बहुत कम और सुधरने के आसार ज्यादा दिख रहे हैं। फिच का बदला रवैया इसका पहला संकेत है। उम्मीद करनी चाहिए कि इसके और भी संकेत जल्दी ही सामने आने लगेंगे।

हालांकि, यहां भारत के सामने एक बड़ी सच्चाई भी उजागर हुई है कि हमें अपनी लड़ाई खुद लड़नी होगी, विकट समय पर दुनिया का कोई देश आपको अचानक मंझधार में छोड़ सकता है। वहां से आगे निकलने में आपकी अपनी ताकत और हुनर ही काम आएंगे। भारत ने इस संकट में दिखाया भी है कि रूस और चीन से हाथ मिलाने की तस्वीर भर ने कैसे अमेरिका पर असर डाला। इससे पहले भी अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत अमेरिका जैसे देश को सामने से चुनौती देकर दिखा

चुका है। हो सकता है कि टैरिफ का विवाद बहुत ही आसानी से सुलझ जाए। अमेरिका, यूरोप और दूसरे पश्चिमी देशों के साथ समझौते भी हो जाएं।

मगर यह एक आत्मचिंतन का क्षण भी है। आजादी के वक्त पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जिस 'ट्रिस्ट विद डेस्टिनी' का आह्वान किया था, भारत भी इस वक्त वैसा ही एक बहुत बड़ा दांव लगाने के लिए खुद को तैयार करे। वह दांव, जो साल 2047 के सपनों को जल्दी से जल्दी साकार करने में एक निर्णायक भूमिका निभाए। पिछली घटनाएं गवाह हैं कि इसके लिए जमीन तैयार है।